अध्याय - पाँच

अध्याय - पाँच

समकालीन राजनैतिक परिदृश्य एवं समीक्ष्य कवि

5 : क :(i) जनमानस कविता और समकालीन राजनीति : -

साहित्य अपने समय का चित्रण हुआ करता है , इसीलिए साहित्य को समाज का दर्पण भी कहा गया है । युगीन परीस्थितियों का प्रभाव हर काल खण्ड के साहित्य पर पड़ता है । सामाजिक , आर्थिक और राजनीतिक परिस्थितियाँ वे स्थितियाँ हैं , जिनसे साहित्य प्रत्यक्षतः और परोक्षतः प्रभावित होता है । स्वाधीन भारत की राजनीति में 60 का दशक एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है । 26 जनवरी 1950 में स्वतंत्र भारत गणतंत्र के रूप में पूरे विश्व में स्वीकृत हुआ । गणतांत्रिक भारत का अपना संवैधानिक स्वरूप निर्मित हुआ । 1952 में प्रथम आम-चुनाव सम्पन्न हुआ । नेहरू ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर भारत की गणतांत्रिक प्रणाली और तटस्थ नीतियों की घोषणा करके देश को सम्मान दिलाया । सन् 1954 में कोलम्बो सम्मेलन और इसी वर्ष चीन के साथ पंचशील समझौता आदि से अंतर्राष्ट्रीय फलक पर भारत की प्रगतिशील और स्वावलम्बी छवि उभरी । देश के भीतर भी नेहरू की प्रगतिशील योजनाओं एवं आदर्शवाद ने जन-सामान्य में आशा और उत्साह के भाव का संचार किया। दो-दो पंचवर्षीय योजनएँ सफलतापूर्वक संपन्न हुई । भारत आत्म निर्भरता के रास्ते पर बड़ी तेजी से आगे बढ़ा । इस तरह छठा दशक भारतीय जनमानस के लिए आत्ममुग्धता और मोहासक्ति का दौर रहा ।

आधुनिक हिन्दी कविता में नई कविता के दौर में इसलिए राजनीतिक चेतना का ठोस स्वरूप दिखाई नहीं देता । नई कविता में यातना-बोध है , अस्वीकृत का स्वर भी है , किन्तु विद्रोह का उभार कम है । पर अक्तूबर , 1962 के चीनी आक्रमण ने समस्त भारतीय चेतना को झकझोर कर उसे एक

मोहासक्त स्थिति से जगाया । पराजित और अपमानित राष्ट्र का मानस एक विक्षोभ से भर गया । नेहरू का आदर्शवाद पूर्णतः ध्वस्त हो गया । निराशा के बादल ने पूरे राष्ट्र को ढँक लिया । 27 मई 1964 को सुखद स्वप्न और बेहतर भविष्य की आशा-ज्योति जन-सामान्य के हृदय में जलाए रखनेवाले आधुनिक भारत के निर्माता स्तंभ जवाहरलाल नेहरू का देहावसान हो गया । इस तरह न केवल भारत के राजनैतिक इतिहास में , बल्कि जीवन के हर क्षेत्र में एक युग का अंत हुआ ।

यह घटना सामान्य नहीं थी । राष्ट्र शोकाकुल था । राजनैतिक धरातल पर अस्थिरता और खालीपन छा गया । ऐसे में लालबहादुर शास्त्री के देश के प्रधानमंत्री पद संभालने से स्थिरता आने लगी । 1965 ई. में हुए भारत-पाक संघर्ष में भारत की विजय से एक अभूतपूर्व आत्म-विश्वास जन्मा । युग-पुरूष नेहरू राष्ट्र को जो आत्मविश्वास 17 वर्षों में नहीं दे पाए थे , वह अब 17 दिन के युद्ध में हुई विजय ने भारत को प्रदान कर दिया । इस विजय ने जन-मानस में व्याप्त निराशा को आत्मविश्वास और आत्मगौरव में बदल दिया । जन-मानस में छाई निराशा समाप्त हो गई और चारों ओर नया जोश भर गया । "जन-मानस में आए इस जोश और आक्रोश ने समस्त भारतीय साहित्य को एक जुझारू मुद्रा प्रदान की । हिन्दी कविता , कहानी आदि में देश की सड़ी गली व्यवस्था से लड़ाई लड़ने की बात इसीलिये इस समय इतने प्रखर रूप में अभिव्यक्ति पाती है ।"[1]

1966-67 में पड़ा भीषण अकाल और उसके पश्चात् जीवन जीने की परिस्थितियाँ निरंतर विषमतर होती गई । टिकट-वोट , आपाधापी और अवसरवादिता आदि से हमारा राजनीतिक वातावरण प्रदूषित होता गया । यहीं से भय , दबाव , स्वार्थ और छल की राजनीति का प्रारंभ हुआ । 'गरीबी हटाओ' का नारा देने वाले राजनेताओं की कथनी और करनी में पर्याप्त अंतर रहा । सन् 1967 में तीसरा आम चुनाव हुआ । 1969 में आर्थिक कार्यक्रमों में गति लाने के लिए बैंकों का राष्ट्रीयकरण हुआ । 62 और 65 के क्रमशः भारत-चीन और भारत-पाक युद्धों का भारतीय अर्थ-व्यवस्था पर भारी दबाव पड़ा था । सातवें दशक के अंत तक देश इन्हीं जटिलताओं , विषमताओं और

अनिश्चितताओं के भंवर में डूबता-उतारता रहा । 1969 का वर्ष देश के आधुनिक इतिहास में एक राजनैतिक विभाजक रेखा खींचता हुआ आया । "इसके बाद भारतीय राजनीति का चरित्र पूर्णतः व्यक्ति केन्द्रित हो जाता है और शक्ति-परीक्षण का वह दौर शुरू होता है , जो शासक दल बनाम विरोधी दल , शासक दल बनाम जनता , केन्द्रीय सत्ता बनाम राज्य सत्ता - के भीतर बहता हुआ राजनैतिक घटनाक्रम को अत्यधिक तीव्र कर देता है ।"[2]

सन् 1967 में हुए कांग्रेस-विभाजन के मूल में छल-बल पर आधारित श्रीमती इन्दिरा गाँधी की सत्ता पर क़ाबिज़ रहने की राजनीति थी । 1971 में बाङ्लादेश को स्वतंत्र कराने के उद्देश्य से भारत को एक बार फिर पाकिस्तान से युद्ध करना पड़ा । देश को इससे काफी क्षति हुई । स्वयं श्रीमती गाँधी की स्थिति पार्टी में फूट एवं देश में व्याप्त अराजकता के कारण कमजोर होने लगी । 1972 में मध्यावधि चुनाव हुए और इन्दिरा गाँधी की पुनः जीत हुई । उधर एक करोड़ से भी अधिक बाङ्लादेशी शरणार्थियों ने देश पर इतना बोझ डाला कि देश की अर्थ व्यवस्था की चूलें हिलने लगीं । 1972 में ही असफल , अदूरदर्शी और अपरिपक्व भारतीय दृष्टिकोण को सिद्ध करने वाला शिमला समझौता हुआ। तुष्टीकरण और गद्दी बचाओ की रणनीति ने राज्यों को काट कर , छोटे-छोटे टुकड़ों को राज्य का दर्जा देने की प्रक्रिया प्रारंभ की । मेघालय , मणिपुर , त्रिपुरा आदि के पूर्ण राज्य का दर्जा प्राप्त कर लेने से अन्य क्षेत्रों की राजनीतिक आकांक्षाएँ बढ़ीं । 1975 में कई घटनाएँ एक साथ घटीं।इनमें महत्वपूर्ण हैं , 12 जून को इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा इन्दिरा गाँधी के चुनाव को अवैध घोषित कर दिया जाना और 26 जून , 1975 को देश में प्रथम बार आपात-स्थिति घोषित किया जाना । आपातकाल के दौरान राजनीति में अपने प्रकार की भ्रष्टता , निरंकुशता , नौकरशाही का वर्चस्व , पुलिस की डंडे की राजनीति , चापलूसी , प्रजातांत्रिक संस्थों एवं मूलाधिकारों आदि की समाप्ति , जनता , प्रेस और कलम की आवाज़ को कुंद और समाप्त करने के अनेकशः कारणों से समस्त देश में व्यापक असंतोष और आक्रोश की व्याप्ति ने पुनः भारतीय मानस को गहराई से झिंझोड़

दिया । देश में अनेक आन्दोलन होने लगे । सन् 1977 तक देश की स्थिति दिनोंदिन बिगड़ती गई । इसी वर्ष आपात काल समाप्त होने पर आम चुनाव हुए । इस चुनाव में काँग्रेस पराजित हुई और विभिन्न राजनीतिक दलों की साझा सरकार (जनता पार्टी) आयी । परंतु अवसरवादी राजनीति , व्यक्तिगत महत्वाकांक्षाओं तथा मोरारजी देसाई के जिद्दी स्वभाव के कारण जनता पार्टी शीघ्र ही विभाजित हुई। वस्तुतः यह समय देश में भयंकर राजनीतिक अस्थिरता का समय था । 1980 में फिर से चुनाव हुए और इन्दिरा गांधी फिर से सत्तासीन हुई । इसके बाद केन्द्रीय और क्षेत्रीय राजनीतिक पार्टियों का एक के बाद एक टूटने-बिगड़ने का सिलसिला शुरू हुआ ।

इस तरह राजनीति में क्षेत्रवाद का महत्व बढ़ा । इन्दिरा गाँधी विश्व में एक कुशल प्रशासिका के रूप में जाननी जाने लगीं , जबकि देश के भीतर उनकी नीतियों के कारण अनेक तरह के षडयन्त्रों को बढ़ावा मिला । विरोधी पार्टी और शासक पार्टी में सीधी टकराहट होने लगी । उधर कश्मीर राजनीतिक उथल-पुथल का केन्द्र बनने लगा और राज्य की जनता केन्द्र और राज्य की परस्पर रस्साकशी , खींचतान , विप्लव , षडयन्त्र की स्थितियाँ भोगने को विवश हुई । फलतः वहाँ एक रक्तरंजित विप्लव की शुरूआत हुई । इधर नेताओं के स्वार्थपरता एवं अकुशलता के परिणाम स्वरूप पंजाब में अलगाववादी धारणा ने जन्म लिया । अकाली आंदोलन हिंसक बनता गया । 16 जून , 1984 को किये गए 'आपरेशन ब्लू स्टार' की तीव्र प्रतिक्रिया में 31 अक्तूबर , 1984 को श्रीमती इन्दिरा गाँधी की हत्या कर दी गई । इस हत्या की प्रतिक्रिया में देश में जगह-जगह हिन्दू-सिख दंगे भड़क उठे और एक नई प्रकार की साम्प्रदायिकता का तांडव शुरू हुआ । 24 जुलाई 1985 को इस समस्या के निदान के लिए पंजाब-समझौता हुआ , पर इस समझौते के सबसे बड़े पक्षधर संत लोंगोवाल की हत्या भी आतंकवादियों ने कर दी । पंजाब राजनीतिक अस्थिरता और अविश्वास के चक्रव्यूह में घिर गया । आतंकवाद ने उसके स्वरूप को और अधिक खौपनाक व घिनौना बना दिया । अंततः वहाँ राष्ट्रपति शासन लागू करना पड़ा ।

संपूर्ण देश में जैसे राजनीतिक पटल पर समस्याओं की बाढ़ आ गई थी । अभी देश पंजाब की समस्या से उबर भी नहीं सका था कि दूसरी तरफ समस्याओं से ग्रस्त असम राज्य की समस्याओं निराकरण हेतु 15 अगस्त 1985 को असम समझौता हुआ । वहाँ क्षेत्रीय सरकार बनी , पर उलफा आन्दोलनकारियों द्वारा अलग असम की माँग ने पूर्वोत्तर राज्यों में भी रक्त रंजित आतंकवाद को बढ़ावा दिया । परिणामतः असम को भी राष्ट्रपति शासन और 'ऑपरेशन बजरंग' का दंश झेलना पड़ा। 1985 में मिजोराम और 1987 में अरूणाचल प्रदेश और गोवा भी पूर्ण राज्य की स्वीकृति पा गए । वास्तव में यह राजनैतिक अस्थिरता को समाप्त करने के लिए किया गया था , लेकिन दुर्भाग्यवश ऐसा नहीं हो सका । भारत के पूर्वी क्षेत्र में गोरखालैंड की मांग को लेकर एक नई राजनीतिक अस्थिरता अस्तित्व में आई । गोरखा राष्ट्रीय मोर्चे ने अपनी माँगों को लेकर हिंसक आंदोलन शुरू किया। इसकी अगवाई सुभाष सिंह ने की । 1987 में सीमित स्वायत्तता का समझौता हुआ तथा दार्जिलिंग , कालिम्पोंग , कुर्सियांग को मिलाकर एक स्वायत्तशासी इकाई का गठन किया गया । इस बीच केन्द्र और प्रान्तीय शासन का द्वन्द्व अनेक रूपों में सामने आया और सामान्य भारतीय जीवन विभिन्न समस्याओं , कठिनाइयों और जटिलताओं से ग्रस्त हो गया । इन राजनीतिक अस्थिरताओं और इनसे उत्पन्न दुरभिसंधियों ने जीवन मूल्यों के विघटन और हताशा को बेतहाशा बढ़ाया । परिणाम स्वरूप भारतीय जन-मानस अनिश्चय , आशंका और दिगभ्रम का शिकार हुआ । फलतः जनता भिन्न खेमों में बँट गयी । नये युग और सामान्य मानव से जुड़ने की प्रतिबद्धता ने वामपंथी चिंतन को बढ़ावा दिया। कांग्रेस के अंदर भी वामपंथी-सोच का पृथक गुट बन गया । साहित्यकार वामपंथी चिंतन से जुड़ कर अपने लेखन और सोच को सार्थक पाने लगे और ये स्थितियाँ कविता को राजनीतिक क्षेत्र में जीवन-यथार्थ से संबद्ध करने का कारण बनी ।

भारतीय राजनीति के इतिहास में साठोत्तरी काल का एक सच और भी यह है कि स्वाधिनता के प्रारंभ में जनता जिन सफलताओं की चकाचौंध में स्वप्न जीवी होने लगी थी । उनका रहस्य जल्दी ही सामने आने लगे और सफलता की चमक दमक के नीचे कुर्बानी असफलता के काँटे जनता को

चुभने लगे । इसे ही मोह भंग की स्थिति कहा गया । हिंदी कविता को समकालीन चेतना इस पर गहरी प्रभाव परिलक्षित होता है । यहाँ आम्बेडकर से जुड़ा एक प्रसंग को उठाना प्राशंगिक होगा । उन्होंने कहा था :-"संविधान भविष्य में सही काम करेगा या नहीं , यह इस पर निर्भर है कि किस प्रकार के लोग उसका इस्तेमाल करेंगे । " पर विडम्बना यह है कि राजनीति के क्षेत्र में ऐसे ही लोगों का बहुतायात से आगमन हुआ है , जिन्होंने अपनी कुर्सी की सुरक्षा और महत्वाकांक्षाओं की प्राप्ति के लिए राष्ट्रहित और मानव-कल्याण को ताक पर रख दिया था तथा सही अर्थों में संविधान का इस्तेमाल नहीं किया । इन्होंने राजनीति की एक अलग परिभाषा गढ़ी , जिसमें मानव-मूल्य व आदर्शों के लिए कोई स्थान नहीं है , महत्व है तो झूठे वादों और खोखली घोषणाओं का , पक्षपात भाई-भतीजावाद और व्यक्तिगत कोष की अभिवृद्धि का, बनावटीपन और धोखे का , वोट और बाहुबल का ।

फलतः तंगी , बदहाली , शोषण तथा भेदभाव भारतीय समाज का यथार्थ बनता गया । गरीबी, भुखमरी , बेकारी , महंगाई , भ्रष्टाचार और कानून के नाम पर घोर अव्यवस्था आदि ने आम आदमी की पीड़ा और समस्याओं को लगातार बढ़ाया । परिणामतः जनमानस के असंतोष व आक्रोश में वृद्धि होती गई । ज्ञान-विज्ञान , तकनीक , अतंरिक्ष , कृषि तथा अन्य क्षेत्रों में हुई प्रगति के बावजूद सामान्य जनता का वर्तमान और भविष्य अनिश्चित और अंधकारपूर्ण है । चुनाव के वक्त वोट की भीख मांगकर सत्ता-संचालक और व्यवस्था- नियामक बनने वाले इन तथाकथित जन प्रतिनिधियों ने जन की घोर उपेक्षा की है ।

ऐसी स्थिति में जनता एक अपाहिजपन सा महसूस करने लगी। देश कर्महीनता और यथास्थितिवाद से घिर गया है । साठ के दशक की इस राजनैतिक झटके ने नेहरू के समाजवाद के स्वप्न को भी प्रश्नचिन्हित किया । राजनीति में नेहरू और साहित्य में अज्ञेय के खोखले आदर्शवाद पर पुनर्विचार की आवश्यक्ता महसूस हुई और समाजवादी-प्रयोगवादी भूटोपिया से हटकर जीवन और साहित्य को यथार्थ ज़मीन पर देखने की कोशिश हुई । इसी दौर के प्रतिनिधि हस्ताक्षरों में

सर्वेश्वर भी हैं । इस दौर ने साहित्यिक धरातल पर स्वाधीनता-आंदोलन की विरासत से सृजन को जोड़ा । साहित्य और जीवन को कर्म और संघर्ष से जोड़ा , आस्था से जोड़ा । चीन से पराजय से जो स्वाभिमान पददलित हुआ था , उसे पुनः अर्जित किया । नेहरू युग के उत्तरार्ध में इंदिरा गाँधी का वर्चस्व बढ़ा और सत्तर का दशक इंदिरा युग का चरम साबित हुआ , आपात काल ने पूरे देश को हिला कर रख दिया । वैचारिक स्वाधिनता पर संकट छा गया । तानाशाही प्रगति से युक्त व्यक्ति केन्द्रित राजनीति का नंगा-नाच होने लगा और लोकतंत्र एक परिहास बन कर रह गया ।

5 : क :(ii) समकालीन राजनीति का यथार्थ प्रभाव : -

यही कारण है कि साठोत्तरी भारतीय राजनीति विसंगतियों और अंतर्विरोधों से ग्रस्त होती गई है । भारतीय राजनीति का जो मूल उद्देश्य लोकतंत्र था , वह खो गया है । लोक और तंत्र की दूरी निरंतर बढ़ती गई है । लोक कमजोर और तंत्र ताकतवर बनता गया है , बल्कि लोक को रौंद कर तंत्र ऊपर आ गया है और नेताओं , पूँजीपतियों , नौकरशाही, अपराधियों आदि से मिलकर अपनी ताकत में बढ़ोतरी की है । इस तंत्र के सर्वसत्तात्मक होने का परिणाम यह है कि आज राजनीति कुत्सा , लिप्सा और निजी स्वार्थ की पूर्ति का केन्द्र बन गई है । फलतः इन सबके विरूद्ध एक तीखी प्रतिक्रिया और तीव्र आक्रोश जन-मानस के भीतर उभरता रहा है और इन सबसे निजात पाने की छटपटाहट ने जनता को जुझारू और विद्रोही बनाया है ।

भारत के राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में मणिपुर के सन्दर्भ में एक उल्लेखनीय एवं विचारणीय तथ्य है, मणिपुरी जनता की इच्छा व अनिच्छा पर ध्यान दिये बगैर सन् 1949 में मणिपुर का भारतीय संघ में विलय करने की घटना । भारतीय राजनीति के इतिहास में घटी इस अभूतपूर्व घटना दूरगामी प्रभाव मणिपुरी मानस और जन-मानस पर पड़ा । प्रारंभ में लगा था कि मणिपुर का भारत संघ विलय सहज स्वाभाविक जनता की इच्छा के अनुकूल था । किंतु जैसे-जैसे विलय समझौते के पन्ने जनता के सामने आये , वैसे-वैसे यह स्पष्ट हो गया कि किस तथाकथित समझौते के पूर्व मणिपुर की जनता

को विश्वास में नहीं लिया गया था । सदियों तक स्वतंत्र राजनैतिक तंत्र के प्रति समर्पित और आस्था जनता ने अपने को छला हुआ महसुस किया । इससे मणिपुरी जन-मानस में विभिन्न स्तरों पर असंतोष की सुलगने लगी विलय के बीस वर्ष बीते न बीते यहाँ के युवा वर्ग ने अपने प्राचीन राज्य सत्ता को वापस पाने के उद्देश्य से संघर्ष और विद्रोह का मार्ग अपनाया ।

यह ऐसा अवसर था , जब केन्द्रीय राजनैतिक सत्ता दूरदर्शिता और समझदारी का उपयोग करके तथा राज्य को आर्थिक , शैक्षिक और सांस्कृतिक विकास की अधिक्तम सुविधाएँ प्रदान करके जनता के आक्रोश को शांत कर सकती थी , लेकिन ऐसा नहीं हुआ । केन्द्रीय राजनीति ने मणिपुर का शासन भी ऐसे स्थानीय नेताओं को सौंपा , जिनके पास न तो राजनैतिक अनुभव था न जन कल्याण के प्रतिरूचि और न विकास योजनाओं की समझ । ये स्थानीय नेता नितांत स्वार्थी जनविरोधी और केन्द्रीय सत्ता के इशारों पर नाचने वाले थे । इनका लक्ष्य विकास योजनाओं के पाने वाले धन को कब्जे में करना था । यह धन इन नेताओं के साथ-साथ भवन-नौकर शाहुओं और ठेकेदारों के जेबों में जाना लगा था । इस प्रकार मणिपुर में सत्ता पर ऐसे वर्गो का नियंत्रण हो गया था , जिन्हें जनता से कोई लेना देना नहीं था । आम जनता से जैसे चली गयी थी , वैसे ही अब छली जाती रही । इसका प्रभाव यह हुआ है कि बड़ी संख्या में युवा वर्ग विद्रोह के रास्ते पर चलने लगा । सत्ता ने इस विद्रोह को समझने के बदले इसे उग्रवाद और आतंकवाद का नाम दे दिया तथा बंदुकों से कुचलने की नीति अपनायी । यह एक और धोखा था जिसने युवा वर्ग को हिंसा अन्तहीन मार्ग पर बढ़ाया और जनता को भौतिक तथा मानसिक कष्टों के नीचे दबा दिया ।विद्रोही युवा वर्ग की गतिविधियों को दबाने के लिए लागू किए गये अतिरिक्त सैनिक बल अधिनियम ने आम लोगों को और भी अधिक पीड़ित किया। समग्र रूप से देखने पर ऐसा कहा जा सकता है कि यहाँ की राजनैतिक दाव-पेच केन्द्रीय सरकार के इशारों पर निर्भर है। जब आम जनता ने देखा कि सत्ता और विपक्ष, दोनों क्षेत्रों के नेता लगातार जनता के अधिकारों पर डाका डाल रहे हैं , वास्तविक समस्याओं से ध्यान हटाने के लिए निरन्तर गैर जरूरी

मुद्दे उछाल रहे हैं, अपराधिकरण का सहारा लेकर अपने सत्ता-बल में बढ़ोत्तरी कर रहे हैं, सेना और पुलिस तक को अपने निहित स्वार्थों के साधन का मामूली औजार बना रहे हैं और चुनावों को मदारी के खेल में बदल रहे हैं तो उसके भीतर आक्रोश तथा नेताओं के प्रति घृणा का जो सैलाब उमड़ आया है उसे समकालीन मणिपुरी कवियों ने अपनी कविताओं में उताड़ा है। यद्यपि श्रीबीरेन की कविताओं में राजनीति पर सीधा वार करनेवाली कवितायें प्रायः कम मिलती है , फिर भी उन्होंने राजनीतिक भ्रष्टाचार से उत्पन्न सामाजिक समस्याओं को उठाकर सामाजिक स्तर पर हो रहे भ्रष्टाचार, अन्याय व अत्याचार तथा शोषण से उत्पन्न आम लोगों के असंतोष, उत्पीड़न वआक्रोश के स्वर को अपनी कविताओं में जगह दी है। इस संदर्भ मे श्रीबीरेन का कहना कि वे राजनीतिक दाव-पेच से अनभिज्ञ है, इसलिए उन्होंने राजनीतिक सवालों का सीधा वर्णन अपनी रचनाओं में नहीं किया है, लेकिन उनका मानना है कि साहित्य में राजनैतिक परिस्थितियों से प्रभावित रूप किसी न किसी रूप में विद्यमान है, इस कथन के भावार्थ को हम समझ सकते हैं ।

अतः राजनैतिक व्यवस्था का भ्रष्ट होना ही आज के राजनैतिक परिदृश्य की सबसे बड़ी विसंगति है । इस भ्रष्ट राजनैतिक व्यवस्था को , जो संसद से लेकर पार्टी-पंचायत तक व्याप्त है , रचनाकारों ने पूर्ण शिद्दत के साथ अपने-अपने सृजन-माध्यम से सामने रखा है । साठोत्तरी साहित्य में इस राजतंत्रीय व्यवस्था का विरोध और सामाजिक-न्याय के लिए पुनः संघर्षरत और समता-समानता के अधिकार के लिए पुनः आवाज उठाई गई है । साठोत्तरी कविता में इसी कर्म संस्कृति के लिए संघर्ष , धर्मनिरपेक्षता के लिए संकल्प , साम्प्रदायिकता का विरोध और लोकतांत्रिक मूल्यों के प्रति आस्था दिखाई देता है । सर्वेश्वर की कविता-जगत का यही राजनीतिक फलक है । उनकी कविताओं में विचारधारा के प्रति अंधापन नहीं है । सर्वेश्वर का झुकाव समाजवाद की तरफ था , यद्यपि वे अंधभक्त नहीं रहे । उनके काव्य की सबसे बड़ी विशेषता उनकी यही आलोचनात्मक राजनीतिक चेतना रही ।

5 : क :(iii) सर्वेश्वर , श्रीबीरेन एवं समकालीन राजनीति : -

"भारतीय जनता ने संविधान को आत्मार्पित और लोकतांत्रिक शासन-प्रणाली को स्वीकृत करते समय अपने जन-नेताओं से जिस बुद्धिमत्ता , कार्य-कुशलता , जन-पक्षधरता , त्याग-भावना , आदर्श आचरण व्यावहारिक-औदार्य , चारित्रिक दृढ़ता , सांस्कृतिक चेतना , वैज्ञानिक चिन्तन , विकास की नीतियों के निर्माण में दूरदर्शिता , कर सकनेवाले शैक्षिक ढाँचे के निर्माण आदि की महत्त्वाकांक्षी आशाएँ की थीं , उनके असफल होने के परिणामस्वरूप मोहभंग की शुरूआत हुई थी।"[3] यह मोहभंग भारतीय राजनीति में सबसे बड़ी त्रासदी है , जिसे आज तक हम सब भोगत रहे हैं । मोहभंग की इस स्थिति को हिंदी साहित्य के सभी साहित्यकारों ने चित्रित किया है । इस स्थिति को सर्वेश्वर ने भी इस तरह व्यक्त करने का प्रयास किया है :-

"उस देश का मैं क्या करूँ
जो धीरे-धीरे लड़खड़ाता हुआ
मेरे पास बैठ गया है ।
.....
सुनो ,
ढोल की लय धीमी होती जा रही है
धीरे-धीरे एक क्रांति-यात्रा
शव-यात्रा में बदल रही है ।
सड़ाँध फैल रही है -
नक्शे पर देश के
और आँखों में प्यार के
सीमान्त धुँधले पड़ते जा रहे हैं
और हम चूहों से देख रहे हैं ।"[4]

कई लोगों के बलिदान व वर्षों के संघर्ष के परिणामस्वरूप मिली आजादी को तथाकथित नेताओं के अव्यवस्थित करतूतों से एक परिहास मात्र बनते देख विक्षुब्ध सर्वेश्वर लिखते हैं :-

"रो-गाकर आजादी लाये
पहन लँगोटी खादी ,
चार कदम भी चल नहीं पाये
इतनी चढ़ गयी बादी ।
रंग तरबूजे का
महक तरबूजे की
अमरीका में डांस करें
औ रूस में मारें कुश्ती ,
देखो अपनी नेताओं की
यारो धींगा मुश्ती ।"[5]

देश की अकर्मणीयता व अपाहिजपन को देख सर्वेश्वर का मन विक्षोभ से इतना अधिक भर गया है कि वे उन सभी रास्तों को बन्द करना चाहते हैं , जिससे भ्रस्त वातावरण की प्रदूषित हवा आती है :-

"असमर्थ देश
असमर्थ प्यार
दोनों को ही मेरा नमस्कार ,
दोनों के ही नाम पर
एक विष-बेल बो लूँगा ।
अब मैं यह खिड़की नहीं खोलूँगा ।"[6]

नव भारत के उज्ज्वल आकाश में नवीन आशाओं से भरपूर जो सपना देखा था जनता ने , उसे भ्रष्ट राजनीतिक व आर्थिक नीति के काले बादल द्वारा धीरे-धीरे निगलते देख सर्वेश्वर का हृदय बेचैन हो जाता है । अपनी बेचैनी को उन्होंने इस प्रकार व्यक्त किया है :-

"साम्यवाद या पूँजीवाद
मैं दोनों पर थूकता हूँ
और पूछता हूँ
जिसके पैर में तुम जूते नहीं दे सकते
उसके हाथ में तुम्हें
बन्दूक देने का क्या अधिकार है"[7]

नव भारत के नव निर्माण की आशाओं के साथ मणिपुरी जनता ने भी अपना भविष्य जोड़ा था। इसीलिए उत्साह व निष्ठा के साथ स्वतंत्रता दिवस का पालन किया करता था । इस उत्सव में भाग लेते समय लोगों के मन में जो उमंग व उत्साह भरा हुआ था , उसी को याद करते हुए श्रीबीरेन लिखते हैं :-

"आज
स्वाधीनता दिवस पर
आती है याद कहानी एक पुरानी -
मैं जब पाँचवीं-छठी कक्षा में
पढ़ता था , तब की ।
गांधी-टोपी खादी की सफेद , सिर पर
हम सब के ,
.....
खड़े थे हाथ जोड़ कर

हम सब पंक्तियों में

.....

नीचे तिरंगे झण्डे के ,

.....

'जन , गण ,मन' मुँह में

मन एकाग्र , नहीं इधर-उधर ।

करते थे कविता-वाचन , वाद-विवाद

माइक पर स्कूल के कार्यक्रम में

स्वाधीनता दिवश के ;

.....

नवीन सूर्य के नव प्रकाश में

देख नई पृथ्वी

नया भारत ,

हुलसित होता था बाल-मन

भूल जाता था खाना-पीना

डूब जाता था

पूर्णतः जल-राशि में खुशी की ।

आप्लावित है हृदय आज भी

स्मरण हो आने पर बाल-हृदय का ;

डूबा हुआ है

उस विस्तृत जल-राशि में पहले जैसा ही

प्रेम और आनन्द की ।"[8]

लेकिन भारत के केन्द्रीय शासन के नेतृत्व के अधीन अपने बहुमुखी विकास के जो सपने मणिपुर की जनता देख रही थी , वे सपने ही रह गये हैं । जनता ने देखा कि कहने को तो उन्हें स्वतंत्रता मिल गई है , लेकिन सही अर्थो में वे अब भी स्वतंत्र नहीं हुई हैं । स्वतंत्रता-पूर्व और स्वतंत्रता प्राप्ति की परिस्थिति में अन्तर बस इतना ही है कि पहले शोषक विदेशी थे , अब अपने ही लोग अपनों को शोषण कर रहे हैं । जिन लोगोंने बहुमुखी सपने दिखाये थे , उन्हीं लोगों ने गरीबों , मजबूरों व पीड़ितों के सपनों के साथ खिलवाड़ कर , उन्हें शोषित बनाया है । आम आदमी पहले जहाँ था , अब भी वहीं पर डरा हुआ -सहमा हुआ सा है । श्रीबीरेन इस स्थिति को बड़ी स्पष्टता के साथ इस तरह अभिव्यक्त करते हैं :-

"बदलता है आदमी
बदलती नहीं स्थिति
अचल है सिर्फ वह मामूली आदमी
उसका आसन है उधर किनारे पर
उस कोने में ।
किसी के देखे बिना बैठा रहेगा उधर ;
पहले की तरह ऐसे ही बैठेगा वह
अपने हिस्से की प्रतीक्षा में
एक व्यर्थ स्वप्न के बाद दूसरा व्यर्थ स्वप्न जोड़ कर ।
उस किनारे बैठेगा
यूँ ही बैठेगा ।"[9]

एक खुशहाल जीवन का सपना संजोना और फिर इन सपनों का यथार्थ भूमी से टकड़ा कर चकनाचूर हो जाना तथा एक भयातुर भविष्य - इन सब को झेल रही हैं आम जनता । इस कल , आज और कल की धूरी को श्रीबीरेन ने अपनी इस कविता में अच्छी तरह स्पष्ट किया है :-

"कल

एक दिन मुझे पक्का विश्वास हुआ था ,

मुझे ही नहीं

इस जगह के सभी लोगों को विश्वास था ;

नया सूरज निकलेगा , देर नहीं है

शुभ्र प्रकाश लेकर ;

उसके बाद ,

उस प्रकाशित जगह पर

प्रफुल्लित होगा सूरजमुखी ;

अपनी ताजगी के साथ झूमते हुए

नाचेगा आनन्द भरी मुस्कान के साथ ,

सुनहरी किरणों में सुबह की

मेरा कोम्बीरै[1] नया जीवन पाकर ।

आज

आज तक अन्धेरा है ;

कब से अन्धेरा है , जानता नहीं मैं ।

ऐसा ही अन्धेरा था जब से मैंमे होश सम्भाला ,

प्रतीक्षारत हूँ आज के लिए व्यग्रता से

नोङ्माइजिङ्[2] के शृंग को देखकर

सोचकर , मिट जाएगा यह अन्धेरा ।

किन्तु सूरज नहीं निकलेगा ,

सूरजविहिन इस अपराह्न में

भयोत्पादक स्वप्न की बड़बड़ाहट गाती है गीत

मानव का महत्ता का गुण-गान -

हे मानव !

हे सूरज !

निकल आओ , निकल आओ ।

किन्तु

बढ़ता जाता है अन्धेरा ।

कल

सुनहला खोङ्गुनमेलै[3]

हँसता है बहुत भयभीत

थोड़ा-सा झाँक कर ।"[10]

(टिप्पणी - १. मणिपुरी नव-वर्ष में पूजा में काम आनेवाला , प्रायः झील में खिलने वाला नीले रंग का पुष्प विशेष , २. एक विशेष पर्वत , ३. स्वर्ण वर्ण का एक विशेष ऑरकिड ।)

मोह-भंग की इस स्थिति को व्यक्त करते हुए श्रीबीरेन अन्यत्र भी लिखते हैं :-

"अब बना लें एक दूसरा

पहले की इसी जगह बना लें

बदले में एक ;

बना लें , बना लें , अरे बना लें

एक और घर

हम सब के रहने लायक

जिसमें बराबर का हिस्सा हो

हम सब का;

उभड़ने लगे आशा के बादल ।

ऐसे ही ,

बनाई गई थीं ये चमकती इमारतें

हम सब के सहने के लिए ।

इनमें है हम सब का हिस्सा ,

मुस्कराते हैं ;

प्रफुल्लित हो जाएगा मनुष्य रूपी फूल ,

भेद नहीं रहेगा

समाज की समरूप गोद में ;

एक साथ खिलेंगे

बहुत-से सूरजमुखी ।

चिल्लाए जोर-जोर से -

हमारा घर हम सब का है

मेरा है , तुम्हारा है , उसका है ,

सब का है

हम सब मालिक हैं ।

किन्तु यह

स्वप्न है स्वप्न

आँखें खोलते ही सब कुछ नष्ट हो गया ,

मिट गया जैसे सूरजमुखी भी , नहीं खिला कोम्बीरै भी ।

वह पुरूष परसों जहाँ बैठा था

वैसे ही बैठा है वहाँ उसी कोने में ।

इसे कैसे कहें

बराबर का हिस्सा मिलता है ।

बराबर का हिस्सा होता है ?

उस मामूली आदमी में तो बदलाव नहीं होता ,

पैरों पड़ता है आज भी परसों की तरह

कुछ संपन्न लोगों के ।

क्यों?

टूट जाता है सब

ढह जाता है सारा ?

यह बीमारी ठीक नहीं हुई इलाज करने पर भी ।"[11]

भारतीय राजनीति की नींव प्रमुखतः मानवतावाद पर आधारित गाँधीजी की नीतियों पर टीकी मानी जाती है , लेकिन दुर्भाग्य की बात यह है कि आज लगभग सभी नेतागण गाँधीवादी टोपी की आड़ में अपने स्वार्थ व महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ती हेतु आम लोगों को लूट रहे हैं , इनकी आस्था व विश्वास के साथ खिलवाड़ कर रहे हैं । गाँधीवाद को अवसरवाद में बदले जाने की इस दूषित क्रिया का पर्दाफाश करते हुए सर्वेश्वर लिखते हैं :-

"मैं जानता हूँ

क्या हुआ तुम्हारी लँगोटी का ,

उत्सवों में अधिकारियों के

बिल्ले बनाने के काम आ गयी ,

भीड़ से बचकर

एक सम्मानित विशेष द्वार से

आखिर वे उसी के सहारे ही तो जा सकते थे ।

और तुम्हारी लाठी ?

उसी को टेक कर चल रही है

एक बिगड़ी दिमाग़ डगमगाती सत्ता ।

और तुम्हारा चश्मा?

इतने दिनों हर कोई

उसे ही लगाकर

दिखाता रहा है अन्धों को करिश्मा ।

तुम्हारी चप्पल ?

गरीबी की चाँद गंजी

करने के काम आ रही है ।

और घड़ी ?

देश के नब्ज की तरह बन्द है ।

अच्छा हुआ

तुम चले गये

अन्यथा तुम्हारे तन का

ये जननायक क्या करते

पता नहीं ।" [12]

दरअसल इस विशाल देश के शासन की बागडोर उन लोगों के हाथों में आ गई थी , जिनके मस्तक पर वर्षों की तपस्या का मुकुट तो था , लेकिन उनके मष्तिष्क में विकास और समस्याओं के हल की कोई स्पष्ट अवधारणा नहीं थी । सर्वेश्वर ने व्यंग्योक्तियों के माध्यम से इस स्थिति को चित्रित करने की कोशिश की है :-

"तेरी भैंस के आगे बीन बजी

तेरी भैंस के आगा शहनाई

तेरी भैंस घुस गयी संसद में

सब संविधान चट कर आयी

तेरी भैंस की भैंस में भैंस रहे

तेरी भैंस की भैंस में भैंस बहे

तेरी भैंस करे जो जी चाहे

तेरी भैंस से अब क्या कौन कहे ?" [13]

इन बुद्धिहीन राजनेताओं के बेसिर-पैर वाले करतुतों तथा चंद लाभ व सुविधाओं के लिए उनके हाँ में हाँ मिलानेवाली जनता के कारण देश का जो नक्शा बना है , इसका अच्छा चित्र खिंचते हुए वे अन्यत्र लिखते हैं :-

"घन्त मन्त दुइ कौड़ी पावा
कौड़ी लैके दिल्ली आवा,
दिल्ली हम का चाकर कीन्ह
दिल-दिमाग भूसा भर दीन्ह ,
भूसा ले हम शेर बनावा
ओह से एक दुकान चलावा ,
देख दुकान सब किहिन प्रणाम
नेता बनेन कमाएन नाम ,
नाम दिहिस संसद में सीट
ओह पर बैठ के कीन्ही बीट ,
बीट देख छायी खुशियाली
जनता हँसेसि बजाइस ताली ,
ताली से ऐसी मति फिरी
पुरानी दीवार उठी , नयी दीवार गिरी ।"[14]

संविधान में घोषित मौलिक अधिकार केवल घोषणापत्र में ही सीमित रह गये हैं , चारों ओर स्थापित स्वार्थों के द्वारा लूट-खसोट मची हुई है । सबसे बड़ी त्रासदी यह है कि नेतागण उन्हीं के सहायक हैं । लोकतंत्र अपने सही अर्थ से दूर होता जा रहा है । लोकतंत्र को अपने स्वार्थ सिद्धी का माध्यम बनानेवालों पर व्यंग्य करते हुए सर्वेश्वर लिखते हैं :-

"हाथ में थैली

और पैर पर टोपी धर

फैलाते हैं सब अपना गोरखधन्धा ,

आँख खोलने वाले को कहते अन्धा

मैं भी दौड़ी

पास न थी पर कानी कौड़ी -

मुँह लटकाये मिले राह में

मुझे किशन-बल देउआ ।

.....

दे आजादी ?

किसके बल पर

दुखिनी कहलाती शहज़ादी ?

गाँधीजी के चेला के ।

पड़ा अकाल , नहीं तो

पूछे जाते नहीं अधेला के ,

बोली मारै

बात-बात में

गोली मारै ,

शोर मचाता छूमै

बच्चे ज्यों लूटें कनकौआ ।"[15]

लोकतंत्र की इस कमजोरावस्था को देख सर्वेश्वर चिंतीत हैं । उन्हें लगता कि अब इसका भविष्य खतरे में है :-

"लोकतंत्र अभी पालने में है
और लकड़बग्घे अँधेरे जंगलों
और बर्फीली घाटियों से
गर्म खून की तलाश में
निकल आये हैं ।"[16]

लोतंत्र को एक घिनौने खेल के रूप में बदलने में सत्ताधारी , वर्गनायकों , बुद्धिजीवियों आदि सभी का हाथ है । अब यह खेल इतना अधिक बिगड़ गया है कि एक और आशा की कोई गुंजाइश नहीं रह गई है । सब गोबरैले बन गए हैं । देश की इस आशाविहीन स्थिति से असंतुष्ट सर्वेश्वर का कथन है :-

"देखने सुनने और समझने के लिए
अब यहाँ कुछ नहीं रहा -
सत्ताधारी , बुद्धिजीवी ,
जननायक , कलाकार ,
सभी की एक जैसी पीठ
काली चमकदार .
एक जैसी रचना
एक जैसा संसार ।
.....
अच्छे से अच्छा शब्द फूलकर
गोबरैले में बदल जाता है
और बड़े से बड़े विचार को
गंदी गोली की तरह ठेलने लगता है -
चाहे वह ईश्वर हो या लोकतंत्र ।"[17]

अब नेता-वर्ग के पास अपने स्वार्थ-साधन में लिप्त होते रहने के कारण इतना अवकाश ही नहीं रहा है कि वह देश की वास्तविक दशा को खुली आँखों से देख सके । आज की व्यवस्था और आज की भ्रष्ट राजनीति का तीखा चित्रण सर्वेश्वर ने इस प्रकार किया है :-

"मुकुट धारण किये
घूम रहा है विज्ञापनबाज शासक
और योद्धाओं की पोशाक
बाजेवालों ने पहन रखी है
आग जलायी जाती है
पर डफ गरम करने के लिए ।
पता नहीं चलता
लोग घबराये आक्रान्त चीख रहे हैं
या आदिम नृत्य कर रे हैं
.....
जो भी आयेगा
समाजवाद और समानता के नाम की
ईंटें पकायेगा
मनमाने बेडौल साँचों में
ढालेगा कच्ची मिट्टी
पर बुझा पड़ा रहेगा आवाँ
नाम गुलबिया चुत्तर झावाँ ।"[18]

वे अन्यत्र भी लिखते हैं :-

"ऊपर पटरी नीचे पहिया
फिर भी सत्तामद में चूर ,

उल्टी गाड़ी चले जा रहे
काले मुँहवाले लंगूर ।
बिन पेंदी की नाव में बैठे
थामे स्वास्थ की पतवार ,
सबके पेट में पानी भर गया
देश का बेड़ा हो गया पार ।"[19]

"यह बन्द कमरा
सलामी मंच है
जहाँ मैं खड़ा हूँ
पचास करोड़ आदमी खाली पेट बजाते
ठठरियाँ खड़खड़ाते
हर क्षण मेरे सामने से गुज़र जाते हैं ।
झाँकियाँ निकलती हैं
ढोंग की विश्वासघत की
बदबू आती है रह बार
एक मरी हुई बात की ।
लोकतंत्र को जूते की तरह
लाठी में लटकाये
भागे जा रहे हैं सभी
सीना फुलाये ।"[20]

श्रीबीरेन ने इन सत्ताधारी कुर्सीधर्मी नेतागण को सुअर के शिर वाले तक कहने में कोई संकोच नहीं दिखाया :-

"सुअर के शिर वाले
पेट भर मल खाकर
पूँछ हिलाते हुए
उभरे तोंत निकाले
हिलते-डोलते टहल रहे हैं
हिलते-डोलते
मन्द गति से बहती हवा में ।"[21]

'प्यार और राजनीति में सब कुछ जायज है' - इस प्रसिद्ध सुक्ति को हमारे राजनेताओं ने बहुत खुब निभाया है , राजनीति के रणक्षेत्र में । वे सत्ता व कुर्सी के लिए कुछ भी करने को तैयार हैं । इसके लिए सच को झूठ और झूठ को सच बनाने में देर नहीं लगती । यहाँ तक की वे अपनी पत्नी को भी दाव पर लगाने में नहीं हिचकते । इस तरह की राजनैतिक कूटनीति सदियों से प्रचलित है , सर्व-सुख की परिकल्पना किये जाने वाले 'राम-राज्य' तक इसका अपवाद नहीं बन सका है । सुप्रसिद्ध पौराणिक कथा का उल्लेख करते हुए श्रीबीरेन ने उस राजनैतिक कूटनीति पर प्रश्नचिन्हीत किया है , जहाँ स्त्री के अधिकारों के लिए कोई जगह नहीं है :-

"माँ सीता सती को
वन में धकेल
सोने की मूर्ती को जगह दे
किया था शासन ,
किया था अश्वमेघ यज्ञ
प्रभु रामचन्द्र ने ।"[22]

एक राजनैतिक यथार्थ यह भी है कि इस क्षेत्र में विजय हासिल करनी है , तो आम जनता को आश्वासनों के मयाज़ाल में फँसाकर , उनका हक क्षीण कर अपना हक जताना है । इस घोर अन्याय को कविता के माध्यम से प्रकाश में लाने की कोशिश , श्रीबीरेन ने की है :-

"सिर झुकाते हैं सब के
साफ सुथरा कपड़ेवाले कुछ लोग
कोशिश कर रहे हैं चढ़ने की उन लोगों के ऊपर
एक कंधे से दूसरे कंधे पर
और बड़बड़ाते हैं मुँह में -
इस तरह चढ़े थे सब
आदमियों की सीढ़ियों से होते हुए
सभी विजयी ;
ऐसा हमेशा से होता आया है ।
वह भीड़ सिर झुकाती रहीं
एक भीड़ कोशिश कर रही हैं चढ़ने को
उस भीड़ के सिर पर पाँव रखते हुए ।
उस भीड़ ने चढ़ने दिया
अपने सिर परे हटाते हुए
प्रकाश के प्रदेश तक पहुँचने को
चढ़ने से पहले वादा किया था उन्हें
हम एक साथ जा रहे हैं
प्रकाश के प्रदेश की ओर
उस प्रकाश में प्रकाशित होंगे तुम भी , मैं भी ।

लेकिन ,

उनके अन्धकार मिटा नहीं आज तक

आज तक झुकाते रहे हैं उनके सिर

चढ़ने दिया है आज तक उनके सिर पर

आज तक

कई लोग रह रहे हैं सिर झुकाते हुए

कई लोग किशिश कर रहे हैं चढ़ने को

उस भीड़ के सिर पर पैर रखते हुए ।"[23]

आज लोक-सेवा से अधिक अपने लिए चुनाव का जुगाड़ करने , वोट और कुर्सी हथियाने के लिए ही सारी जोड़-तोड़ करते रहते हैं । पहले दल की टिकट प्राप्त करने के लिए धरती और आकाश के कुलाबे मिलाते हुए प्रयत्न करना , फिर चुनाव में साम , दाम , दंड , भेद , जाति-पाँति सभी अस्त्रों का प्रयोग कर वोट प्राप्ट करना , चुनाव जीतने पर कोई कुर्सी , विशेषतः मंत्री-पद , हथियाना और फिर सत्ता के केंद्र में बने रहने के लिए विविध रूपों में प्रयत्नशील रहना आदि राजनीतिकों के जाने-पहचाने पैंतरे हैं । चुनाव के इस तांडव का यथार्थ चित्र सर्वेश्वर की इस कविता में देखा जा सकता है:-

"है लाठियों में तेल मल के आ रहा चुनाव

हत्याओं की गली से चल के आ रहा चुनाव

दौलत के संग उछल-उछल के आ रहा चुनाव

बन्दूकों में उबल-उबल के आ रहा चुनाव

मतपेटियों में पत को छल के आ रहा चुनाव

मतदान केन्द्रों में जल के आ रहा चुनाव

हम तंग आ गये हैं अब ऐसे चुनाव से

आवाज आ रही है सुनो गाँव-गाँव से ।

.....

हत्यारे मिल रहे हैं गले इस चुनाव में
लँगड़ा के जात-पाँत चले इस चुनाव में
पाखण्ड पाप ढोंग पले इस चुनाव में
बेघर गरीब जाते छले इस चुनाव में
इक वर्ग है जूतों के तले इस चुनाव में
इक वर्ग आसमान ढले इस चुनाव में
हम तंग आ गये हैं अब ऐसे चुनाव से
आवाज आ रही है सुनो गाँव-गाँव से ।
हर एक ढाँकने का लबादा है ये चुनाव
हर बार झूठमूठ का वादा है ये चुनाव
कुलटा औ'वेश्या का इरादा है ये चुनाव
हम तंग आ गये हैं अब ऐसे चुनाव से
आवाजा आ रही है सुनो गाँव-गाँव से ।"[24]

चुनाव के इस तांडव नृत्य के बाद आम जनता की क्या स्थिति रही होगी , इसका स्पष्ट चित्र सर्वेश्वर की कविता के इस छोटे से अंश में देखा जा सकता है :-

"डालियाँ
बदली कुर्सी में तना
तख्त में
जड़
अलाव में पड़ी ।"[25]

इस तरह हम देखते हैं कि राजनीतिज्ञों के भ्रष्ट आचरण ने आज शासन-तंत्र और व्यवस्था में प्रत्येक स्तर पर भ्रष्टाचार को व्यापक रूप में पनपने का अवसर प्रदान किया । फलतः समाज और शासन में सभी स्थानों पर भ्रष्टाचार का बोलबाला हो गया है । जो जितना अधिक भ्रष्ट है , वह उतना

अधिक समृद्ध और बड़ा आदमी बन जाता है । भ्रष्ट साधनों से भी प्राप्त समृद्धि और बड़प्पन को समाज में मर्यादा और गौरव मिल जाने से भ्रष्टाचार को और भी अधिक बढ़ावा मिला । प्रशासन, पुलिस, औद्योगिक प्रतिष्ठानों , अध्यापक , दुकानदार आदि समाज के सभी क्षेत्रों और वर्गों में भ्रष्टाचार का प्रसार हो गया है । रक्षक से भक्षक बनने की इस भ्रष्ट परिस्थिति को सर्वेश्वर इस तरह व्यक्त करते हैं :-

"पहले राज की पुलीस थी भैया
आज पुलिस का राज है ,
जितना खुजाओ उतना बाढ़े
यह कुकुर की खाज है ।

पहले ढोल में पोल सुना था
अब हर पोल ही ढोल है ,
अन्यायों का चौबारा है
न्याय का पत्ता गोल है ।
पहले नेता की टोपी थी
अब टोपी ही नेता है
जो इसको पूजे पुजवाये
बैठ के अण्डा सेता है ।

पहले राम ने सीता छोड़ी
इस धोवी के कहने पर
अब के राम गधा न छोड़े
लाख दुलत्ती सहने पर

मंत्र जपा करते थे पहले
अन्त समय में शांति के ,
अब तो जनम के पहले
नारे देने होंगे क्रांति के ।"[26]

कभी सत्ता , कुर्सी व धन-शक्ति के बल पर गरीब और मजबूर लोगों की जिन्दगी के साथ खिलवाड़ करते हैं तो कभी स्त्री की इज्जत लुट कर अपनी शक्ति का प्रदर्शन करते हैं ये लोग , जिनका समाज में ऊँचा स्थान है । ये लोग गुनाह करके साफ मुकड़ जाते हैं । शोषक वर्ग के इस चरित्र को दर्शाते हुए श्रीबीरेन लिखते हैं :-

"यह कमल सुदर है
यह कमल देखनेयोग्य है
फैलती है खबर
चारों ओर ।

एक दिन
राजा के कार्यवाहक
एक लोभी मैतै दरबारी
चौड़े फलवाली तलवार लाकर आता है ।
सुन्दरता से चिढ़
उन से निकली ज्वालाओं को
वह पुष्प सह लता है
हिलते-डोलते
कष्ट से ।

उसके मोटे-मोटे हाथों ने
पुष्प के कोमल हृदय में
भोंक दी पूरी तलवार

मैंने नहीं , उसने किया है
मैंने नहीं , उसने किया है ;
एक दूसरे को दोषी ठहराते हैं
आपस में ।
एक निष्पाप नवजात शिशु
बहाता है आँसू उसकी आँखों से
निवर्जन ।
सत्य की देवी मुँह फेरती है संकोच से ।
गणतंत्र की देवता रूपी मक्खियाँ
खून चूसती हैं
कोमल कमल की छाती पर बैठकर ।"[27]

इस तरह के असुरक्षित सामजिक वातावरण की शिकार बनी एक स्त्री की दर्दनाक मौत के चित्र को श्रीबीरेन ने अपनी कविता में उतार कर इस तरह के घृणित अपराध करनेवालों का तिरस्कार किया है , साथ ही अपराधियों के संरक्षकों व पोषकों की घोर निन्दा की है । यह घटना कवि ने अपनी आँखों से देखी है और उस घटना ने कवि-हृदय को बुरी तरह से हिलाया था :-

"असम राईफल्स के बगल की
सुखी तलैया में
झाड़ियों के बीच
पीठ के बल पड़ी है

एक मैतै औरत मृत
बिना फनेक के।
सुकोमल नरम
मुलायम
दोनों गोरे वक्ष
फट गए बीचोंबीच।
टुकड़ों में फूट जाने की
जबरदस्ती से असह्य हो
बिखर गयी सब पंखुड़ियाँ।
सारे कोमल अंग युवती के
हो गये काले
फट गये सब ताप से।
एक बड़ी सी काली मक्खी
भिनभिनाती हुई
उड़ रही है इधर-उधर
देख रहे हैं लोग घेर कर।" [28]

जातिवाद , धार्मिक , सांप्रदायिक व व्यक्तिगत कारणों से प्रतिदिन होने वाले दंगे-फसाद , हड़ताल , जुलूस , बंद आदि की खबरें रोजमर्रा की जिन्दगी बन गयी है । तथाकथित राजनेताओं व समाजसेवकों की महत्त्वाकांक्षाओं के लिए बली चढ़नी पड़ती है आम जनता को । यहाँ तक कि छोटे बच्चों , जिनके हाथ में किताब होनी चाहिए और माँ की गोद में खेलना चाहिए , को भी ये अपने मोहरों के रूप में इस्तेमाल करते हैं । राजनीति के इस घिनौने खेल का यथार्थ चित्र सर्वेश्वर ने अपनी कविताओं में अंकित किया है । कुछ उदाहरण दृष्टव्य है :-

"नंगे पैर , चीथड़े पहने
हाथ में बन्दूक लिये ,
कँटीली झाड़ी पर पड़ी एक औरत की लाश
मेरी आँखों के सामने अक्सर नाच जाती है , "[29]

"यह बच्चा है इसका कटा हुआ धड़
बस्ता लिये स्कूल के फाटक पर पड़ा है
इसके हाथ में पत्थर है
जिसे वह पुलिस पर फेंक रहा था ,
यह बूढ़ा अपनी सूखती फ़सल के लिए
रात में बरहा काट रहा था ,
यह जवान जब कुछ नहीं बना
छर्रों की बन्दूक लिये हवेलियाँ लूटने की
सोच रहा था ।"[30]

एक अनिश्चित भविष्य के साथ जी रहा है समकालीन व्यक्ति । एक अत्यन्त असुरक्षित वातावरण में हर क्षण एक अनजाने डर को सीने में डबा कर जी रहे समकालीन व्यक्ति की इस मजबूरी को श्रीबीरेन ने अपनी कविता में उजागर किया है :-

"कुछ फुटा
ढेर रात को
एक बड़ा सा 'बम' फटने के जैसे ।
क्या है ? क्या है ?
घबड़ा जाते हैं लोग
दिल धड़कता है , डर के मारे
सभी सुननेवालों का

उस रात , भर गया था मन

डर से ।

.....

अंधेरी रात को ;

एकदम काले काले

एकदम काले काले

मांस पर मांस

फार कर खाया था

मुट्ठी भर भर के । "[31]

ठीक यही स्थिति सर्वेश्वर की कविता में भी देखी जा सकती है :-

"गोलियों की आवाज़

मुझे सुनायी देती है

और एक गरज भी

जो उसे इस तरह झपट लेती है

जैसे भुनगे को हथिलियाँ ।"[32]

दुःख जब अति की सीमा पार कर लेता है , तो आँसुओं की कोई जगह नहीं रहती । और आज रोजमर्रा की मार-पीट में कभी किसे पति या संतान और कभी किसी के भाय या बहन की मौत होती है। दुःख के इस भयानक आक्रमण में पत्थर बनी लोगों की आँखों को देख श्रीबीरेन का कवि हृदय भी विह्वल हो जाता है । इसलिए वे कहते हैं :-

"माँ

तुम कितनी दुःखी हो ।

तुम्हारी संतान बिछड़ गई

पति बिछड़ गया

भाई-बहन बिछड़ गये

इतने पर भी नहीं रोएगी

तो कब रोएगी?

माँ , तुम्हें भी रोना ही है । "[33]

दुःखी व पीड़ितों की चीत्कारों से भरे समकालीन राजनैतिक व सामाजिक परिवेश में प्रेम व विश्वास की कोई जगह नहीं रही है । ऐसी स्थिति में श्रीबीरेन को वर्तमान जीवन का भविष्य अंधेरे में भटकता हुआ दिखाई देता है :-

"सुनाई पड़ रही है अपने इन कानों में

दुःखित और पीड़ितों के रोने-धोने की आवाज़

अत्याचार की पीड़ा की आवाज

निर्धनता में , खाने-पीने के अभाव में

टूटने वाला साँस ;

दिखाई दे रही हैं अपनी इन आँखों में

संस्कार की काली ज्वालाएँ ।।

हे पृथ्वी ,

हे धरती !

तुम नर-बलिवेदी

मानव-अत्याचार-स्थली का जो ले रही हो रूप

क्या यह उचित है ?

हर दिशा में

झूठ और फरेब के बीच

हे मनुष्य !

तुम अपने भविष्य पर

विश्वास करते हो अब भी ?

लग रहा है डर पढ़ने से

अखबारों के पन्नों में

नरमेघ यज्ञ के समाचार ।।

कहाँ है धर्म

कहाँ है सच

कहाँ है प्रकाश

कहाँ है प्रेम ?"[34]

दुराचारियों के इस अतिक्रमण को देख श्रीबीरेन ईश्वर से शिकायत भी करते हैं कि :-

"हे भवान् ,

घोषित किया था तुमने -

जब पतन हो जाता है धर्म का

जब उठाता है सिर अधर्म का

सत्य की रक्षा के लिए , असत्य के दमन के लिए

अच्छाई की रक्षा के लिए , बुराई के नाश के लिए

समय-समय पर

पदागमन होता है इस धरती पर ।

धर्म-अधर्म में

अच्छाई-बुराई में

स्पष्ट रूप से विभाजन

क्या नहीं कर सके तुम

इस नए प्रकाश में ?"[35]

वे अपने को आश्वासन दिलाना चाहते हैं कि अत्याचार और अन्यायों से लड़ने कोई युग-पुरूष का जरूर पदागमन होगा इस धरती पर प्रेम , अहिंसा व मानवतावाद का संदेश लेकर :-

"नहीं किया जा सकता तुम्हारा बहिष्कार
तुम्हारा महत्व व्यापक है सदा;
आज भी
इन्तजार है व्यग्रता से तुम्हारा ।
लौट आओ पुनः
हे महात्मा
हे प्रेम
हे अहिंसा ।"[36]

और फिर कहते हैं :-

"लेकिन तुम भी आज
इस संक्रांति काल में
रह गए हो पत्थर के पत्थर
रहते हो एकदम खड़े ,
नहीं बोलते कुछ भी ,
देखते हो सिर्फ
अब तो !
सोचते हो , कोई लाभ नहीं बोलने का ?
या
सोचते हो , कर दिया गया है बहिष्कृत मानकर बेकार
इस असामान्य वातावरण में आज के
महात्मा तुम्हें ? "[37]

सर्वेश्वर को विश्वास है कि यदि हम जाति , धर्म व भाषा की भेद-भावना तथा स्वार्थ-भाव को छोड़ कर , एक दूसरे के सहायक बनते हुए इन भ्रष्ट शासकों व शोषकों के अत्याचारों व अन्यायों का सामना करें , तो हमारे खोये हुए मौलिक अधिकार व सम्मान प्राप्त होंगे :-

"यह जहरीली गैस फैल रही है
बरसात के इस गहराते-भीगते अँधेरे की तरह ,
हम सबको इसे साथ-साथ पार करना है
एक दूसरे का छाता और टार्च बनते हुए
और उस सूर्ख रोशनी के दायरे में खड़े होकर
जुल्म के नक्शों पर आजादी के ठिकाने खोजने हैं
और हासिल करने हैं ।"[37]

इस युग-परिवर्तन के लिए एग युग-क्रांति का आह्वान करते हुए सर्वेश्वर कहते हैं :-

"वह अंधा है
जो शासन
चला रहा है बन्दुक की नली से
हत्यारों का धन्धा है
यदि तुम
यह नहीं मानते
तो मुझे
अब एक क्षण भी
तुम्हें नहीं सहना है ।
याद रखो
एक बच्चे की हत्या

एक औरत की मौत

एक आदमी का

गोलियों से चिथड़ा तन

किसी शासन का ही नहीं

सम्पूर्ण राष्ट्र का है पतन ।

ऐसा खून बहकर

धरती में जज्ब नहीं होता

आकाश में फहराते झण्डों को

काला करता है ।

जिस धरती पर

फौजी बूटों के निशान हों

और उन पर

लाशें गिर रही हों

वह धरती

यदि तुम्हारे खून में

आग बनकर नहीं दौड़ती

तो समझ लो

तुम बंजार हो गये हो –

तुम्हें यहाँ साँस लेने तक का नहीं है अधिकार

तुम्हारे लिए नहीं रहा अब यह संसार ।

आखिरी बात

बिल्कुल साफ

किसी हत्यारे को

कभी मत करो माफ

चाहे हो वह तुम्हारा यार
धर्म का ठेकेदार ,
स्वनामधन्य पहरेदार । "[38]

सर्वेश्वर और श्रीबीरेन की कविताओं के अध्ययन से यह बात स्पष्ट होती है कि दोनों कवियों ने समान रूप से समकालीन राजनीतिक भ्रष्टाचार को झेला है । अतः उनकी कवितओं में राजनीतिक भ्रष्टाचार , शोषण , अन्याय , पाखण्ड व आडम्बर आदि का कटु व्यंग्योक्तियों के साथ जबरदस्त विरोध किया गया है । इन सब से निजात पाने के लिए दोनों कवियों ने एक युग-क्रांति की आवश्यक्ता को महसूस किया है ।

सन्दर्भ :-

1 . डॉ. पुष्पपाल सिंह ; समकालीन हिन्दी कहानी , पृ -25

2 . डॉ. ऋषभ देव शर्मा ; हिन्दी कविता : आठवाँ-नवाँ दशक , पृ -25

3 . डॉ. देवराज; समकालीन हिन्दी मणिपुरी कविता बहुवचन (अन्तर्राष्ट्रीय हिन्दी त्रैमासिक) , अंकः 18 , जनवरी-मार्च , 2008

4 . सर्वेश्वर ; कविताएँ-१ (धीरे-धीरे) , पृ.-88, 90

5 . सर्वेश्वर ;खूँटियों पर टंगे लोग (रंग तरबूजे का) , पृ. - 71-72

6 . सर्वेश्वर ; कविताएँ-२ (यह खिड़की) , पृ.-95

7 . वही (युद्ध-स्थिति) , पृष्ठ – 61

8 . श्रीबीरेन ; मपाल नाइदबसिदा ऐ (निङ्तम नुमित् असिदा), पृ. - 87-88

9 . वही (मीचम्) , पृ. - 5

10 . वही (ङराङ् , ङशि , हयेङ्) , पृ.-9-10

11 . वही (मीचम्), पृ.-3, 4, 6,

12 . सर्वेश्वर ; कविताएँ -२ (पंचधातु) , पृष्ठ – 109 – 110

13 . वही (राग डींग कल्याण) , पृष्ठ – 120

14 . वही (घन्त-मन्त) , पृष्ठ – 68

15 . सर्वेश्वर ; कविताएँ-१ (चुपाई मारौ दुलहिन) , पृ.-147-148

16 . सर्वेश्वर ; कोई मेरे साथ चले (उस समय तुम कुछ नहीं कर सकोगो), पृ.-69

17 . सर्वेश्वर ; कुआनो नदी (गोबरैले), पृष्ठ – 51

18. सर्वेश्वर ; कविताएँ -२ (स्थिति यही है) , पृष्ठ – 198

19. सर्वेश्वर ; कोई मेरे साथ चले (लोकतंत्र का गाना- १), पृ.-88

20. सर्वेश्वर ; कविताएँ-२ (यह खिड़की) , पृ.-93

21. श्रीबीरेन ; तोल्लबा शादुगी वाखल (अमम्बा मपै मपै), पृ.-52

22. श्रीबीरेन ; सनागी कैराक (सनागी सीता), पृ.-10

23. श्रीबीरेन ; मसिना इम्फालगी वारीनि (कैराक), पृ.-11

24. सर्वेश्वर ; कोई मेरे साथ चले ('भारत भाग्य विधाता' नाटक के लिए), पृ.-111 - 112

25. वही (देश), पृ.-50

26. वही (कल और आज), पृ.-86 -87

27. श्रीबीरेन ; तोल्लबा शाढुगी वाखल (थम्बाल चाम्मगा निपाल), पृ.-49 - 50

28. वही (अमम्बा मपै मपै), पृ. – 53

29. सर्वेश्वर ; कविताएँ -२ (युद्ध-स्थिति) , पृष्ठ – 61

30. सर्वेश्वर ; कुआनो नदी (कुआनो नदी के पार), पृष्ठ – 25

31. श्रीबीरेन ; तोल्लबा शाढुगी वाखल (अमम्बा मपै मपै), पृ.-51

32. सर्वेश्वर ; कोई मेरे साथ चले (क्रांतिकारी की मौत), पृ.-62

33. श्रीबीरेन ; सनागी कैराक (कुम्सी कुम्ना लोइशिन्लक्पदा), पृ.-101

34. श्रीबीरेन ; मपाल नाइदबसिदा ऐ (लाइरैपाक्की मोमोन मिनोकता), पृ. 44 – 45

35. वही, पृ. – 45

36. वही (निङ्तम नुमित् असिदा), पृ. - 90

37. वही

38. सर्वेश्वर ;खूँटियों पर टंगे लोग (तानाशाही से लड़ती एक कवयित्री) , पृ. - 54

39. सर्वेश्वर ; कोई मेरे साथ चले (कभी मत करो माफ-२), पृ.-81- 82